UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180342

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.61 Acc No. GH1326.

Author :

Title : भूषण

'P—901—26-3-70—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. [illegible] Accession No. [illegible]

Author [illegible]

Title [illegible]

This book should be returned on or before the date last marked below.

मधुशाला

सन १९३३—३४ में

लिखित

बच्चन की अन्य प्रकाशित रचनाएँ

१ आकुल अंतर—

इकहत्तर छोटे-बड़े गीतों का संग्रह

२ एकांत संगीत—

एक सौ छोटे गीतों का संग्रह

३ निशानिमंत्रण—

एक सौ छोटे गीतों का संग्रह

४ मधुकलश—

लंबी कविताओं का संग्रह

५ मधुबाला—

लंबी कविताओं का संग्रह

६ खैयाम की मधुशाला—

रुबाइयात उमर खैयाम का अनुवाद

७ तेरा हार—

प्रारंभिक कविताओं का प्रथम संग्रह

इनके विषय में विशेष जानकारी के लिए पुस्तक के अंत में देखिए।

मधुशाला

बच्चन

ग्रन्थ संख्या—१०२

प्रकाशक तथा विक्रेता

भारती-भण्डार

लीडर प्रेस, इलाहाबाद

इस पुस्तक के पहले चार संस्करण सुषमा निकुंज प्रयाग से प्रकाशित हुए थे।

पहला संस्करण—अप्रैल, १९३५

दूसरा संस्करण—सितंबर, १९३६

तीसरा संस्करण—दिसंबर, १९३८

चौथा संस्करण—जुलाई, १९४०

पाँचवाँ संस्करण—फरवरी, १९४३

मूल्य [redacted]

मुद्रक

कृष्णाराम मेहता

लीडर प्रेस, प्रयाग।

विज्ञापन

आज हमें बच्चन की 'मधुशाला' का पाँचवा संस्करण प्रकाशित करते समय बड़ा हर्ष हो रहा है! इसका पहला संस्करण सन् १६३५ में हुआ था। आज सात वर्षों से यह रचना हिंदी पठित जनता के बीच पढ़ी और सुनी जा रही है किंतु इसका आकर्षण नहीं घटा। आज भी बच्चे इसे सुनने को चंचल, युवक इसे सुनने को उत्सुक और वृद्ध इसे सुनने के इच्छुक रहते हैं। इतना ही नहीं, हिंदी से अपरिचित व्यक्ति भी इस रचना का वैसा ही आनंद लेते हैं जैसा हिंदी से सुपरिचित व्यक्ति। हमें कोई आश्चर्य नहीं कि अब तक इसके इतने अधिक संस्करण हो चुके हैं।

बच्चन की रचनाओं में 'मधुशाला' का एक विचित्र स्थान है। समालोचकों की राय में इसके विषय में आकाश पाताल का अंतर है। जहाँ कुछ लोग इसे उच्च कोटि की रचना समझते हैं वहाँ कुछ लोग इसे सस्ते क़िस्म की तुकबंदी भी कहते हैं। लेखकों में जहाँ बहुतों ने इसका अनुकरण किया है वहाँ बहुतों ने इसका उपहास भी किया है। यद्यपि अपने प्रयास में असफलता दोनों को मिली है। अनुकरण करने वालों में कोई दूसरी

'मधुशाला' नहीं लिख सका और उपहास करनेवाले 'मधुशाला' को उसके स्थान से एक भी सीढ़ी नीचे नहीं गिरा सके। जनता ने बिना किसी की परवाह किए इसे पढ़ा है, सुना है, और इसका आनंद लिया है। आधुनिक खड़ी बोली काव्य की कोई पुस्तक 'मधुशाला' के समान लोकप्रिय नहीं हो सकी इसमें तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं है। 'मधुशाला' की लोकप्रियता का रहस्य हम समालोचकों पर, और समालोचकों की सम्मति की यथार्थता हम समय पर छोड़ते हैं। हमारा विश्वास है कि किसी भी रचना का सबसे अच्छा और सब से बड़ा समालोचक समय है। किसी पुस्तक के जीवन में सात वर्ष का समय कुछ भी नहीं है, पर कितनी ही पुस्तकों का भाग्य इतने अल्पकाल में ही निर्णय हो जाता है। अभी हम केवल इतना कह सकते हैं कि समय की परीक्षा के लिए बच्चन की यह कृति दृढ़ता से खड़ी है।

यह संस्करण पिछले संस्करणों का पुनर्मुद्रण मात्र है। पुस्तक के मूल्य में हमें अवश्य वृद्धि करनी पड़ी है। परंतु उसके लिए काग़ज़ और छपाई का बढ़ता हुआ दाम और दर उत्तरदायी है। हमें विश्वास है कि इस स्वल्प मूल्य-वृद्धि के कारण बच्चन की लोकप्रियता में कमी न आएगी।

—**प्रकाशक**

संबोधन

मेरे मादक !

उस दिन उमर खैयाम के हृदय के भावना प्रसूनों को अपनी भाषा के तार में पिरोकर तेरे चरणों में चढ़ा चुका हूँ ! तुझे उन्हें देखकर प्रसन्नता हुई। प्रसन्नता हुई इस बात की, कि तेरा एक भक्त तेरी एक आज्ञा का पालन कर सका, पर मेरा हृदय तो संतुष्ट न हुआ। दूसरे की वस्तु अपनी भेंट की डाली में लेकर तेरे मंदिर में आते समय मेरे मन में कितनी लज्जा थी, इसे तू क्या जाने ! यदि उन प्रसूनों के लिए तेरी आज्ञा न

होती और मैं अपनी इच्छा से उन्हें लेकर तेरे पास आने का प्रयत्न करता तो संभवतः मैं मार्ग में ही गड़ जाता—तेरे मंदिर तक पहुँच ही न पाता, पर तेरी आज्ञा और तेरी प्रसन्नता के विचार ने मुझे तेरे समीप ला उपस्थित किया; यद्यपि मैं तुझसे यह कह देने में कोई हानि नहीं समझता कि भक्त भगवान के चरणों में कोई भेंट उनकी प्रसन्नता के विचार से नहीं चढ़ाता। दीन, हीन, अकिंचन भक्त यह विचार ही कब अपने मन में ला सकता है कि वह भगवान के चरणों में कोई ऐसी वस्तु उपस्थित कर सकता है जिससे वह प्रसन्न हो सकें। वह तो भगवान के चरणों में अपनी भेंट अपने हृदय की संतुष्टि के लिए ही चढ़ाता है। भगवान के चरणों में वह अपना कुछ रखकर अपने ही हृदय का भार हल्का करता है—एक बोझ उतारता है। उस दिन दूसरे के प्रसून जो मैंने तेरे चरणों में अर्पित कर दिए, उससे मेरे हृदय का भार तो हल्का न हुआ, मेरे हृदय का बोझ तो न उतरा, मेरे हृदय को तो संतुष्टि न मिली।

मेरी इन बातों को सुनकर, सोचता हूँ, तुझे ध्यान आएगा कि मैं कितना स्वार्थी हूँ, जो तेरी प्रसन्नता में अपनी प्रसन्नता नहीं समझता! प्रसन्नता तो मुझे बड़ी हुई थी। अपने आराध्य देव के अधरों पर प्रसन्नता की रेखा देखकर कौन भक्त आनंद की चरम सीमा को नहीं छू लेता, कौन भक्त अनंदातिरेक से पागल नहीं हो

उठता ; पर भक्त-हृदय आनंद और प्रसन्नता के लिए ही तो आकुल-विह्वल नहीं रहता। प्रसन्नता तो आत्म-चेतना की एक अनुभूति है। भक्त तो आत्म-समर्पण करके वह विस्मृति ढूँढता है, जो हर्ष और विषाद से परे है। अरे, यह अपनेपन का भार ! अरे, इसे उतार फेंकने की आतुरता ! अरे, इस महान त्याग में भी स्वार्थ की सत्ता ! मानव-जीवन कितना अपूर्ण है ! हमारे महान त्याग में भी हमारा महान स्वार्थ है। संसृति की नींव इसी त्याग-स्वार्थ की महान भावना पर स्थित है।

बादल अपना अपनापन अगणित बूँदों में, बूँदें अपना अपनापन जल-धाराओं और नदियों में और नदियाँ अपना अपनापन समुद्र में खोने को आतुर हैं; और वह समुद्र भी तो हर समय विक्षुब्ध रहकर किसी ऐसे की खोज कर रहा है जिसके चरणों में वह अपनी संपूर्ण जलराशि अर्घ्य-रूप में अर्पित करके रिक्त हो जाए। पृथ्वी अपना अपनापन अगणित वृक्ष, वेलि, पौधों में, वृक्ष, वेलि, पौधे अपना अपनापन पुष्प और कलियों में, पुष्प और कलियाँ अपना अपनापन—अपना सौरभ—समीर में मिश्रित करने को आकुल हैं; और वह समीर भी तो निरंतर चंचल रहकर किसी ऐसे को ढूँढ रहा है जिसके अंचल को एक बार—केवल एक बार—लहराकर वह उसी में विलुप्त हो जाए। पतंग अपना अपनापन दीपक के आगे, दीपक अपना अपनापन दिवस

के आगे, दिवस अपना अपनापन रजनी के आगे और रजनी—शशि-तारक-मणि-मंडित रजनी—अपना अपनापन सूर्य के आगे अर्पण करने को व्याकुल है; और वह सूर्य भी तो आदि सृष्टि से किसी ऐसी महज्ज्योति के चरणों को प्राप्त करने के लिए तपस्या कर रहा है जिसकी एक बार आरती उतारकर वह बुझ जाए !

इसी प्रकार वादक अपना अपनापन स्वरों में प्रकट करके यह चाहता है कि वे किसी के कानों में क्षण भर गूँजकर विस्तृत गगन में क्षीण होकर विलीन हो जाएँ। चित्रकार अपना अपनापन रेखाओं तथा रंगों में प्रकट करके यह इच्छा करता है कि वे किसी की आँखों में पलभर प्रतिबिंबित होकर धुँधले बनकर तिरोहित हो जाएँ। शिल्पकार अपना अपनापन पाषाण-प्रतिमाओं में अभिव्यक्त करके यह अभिलाषा करता है कि वे किसी की मृदुल हथेली का क्षणिक स्पर्श प्राप्त कर खंड-खंड होकर धरा पर बिखर जाएँ। और, कवि अपना अपनापन सजीव शब्द-पदों में व्यंजित करके चाहता है कि वे किसी के हृदय को शीघ्रता से छूकर संसार से सघन कोलाहल में छिप जाएँ—खो जाएँ !

हाँ, तो इस स्वार्थी मानव की, जिसमें से मैं भी एक हूँ, चरम अभिलाषा आत्मानंद नहीं आत्मसमर्पण है। इसका सौभाग्य इसे उस दिन प्राप्त न हो सका। इसी कारण इतनी जल्दी आज यह कुछ अपनापन लेकर तेरे चरणों में फिर उप-

स्थित हुआ है। इस अनिवार्य स्वार्थ के लिए मैं क्षमा की भिक्षा माँगता हूँ। मुझे विश्वास है कि मैं निराश नहीं लौटूँगा। कभी नहीं लौटा!

आज मदिरा लाया हूँ—मदिरा जिसे पीकर भविष्यत के भय भाग जाते हैं और भूतकाल के दारुण दुख दूर हो जाते हैं, जिसे पानकर मान-अपमानों का ध्यान नहीं रह जाता और गौरव का गर्व लुप्त हो जाता है, जिसे ढालकर मानव अपने जीवन की व्यथा, पीड़ा और कठिनता को कुछ भी नहीं समझता और जिसे चखकर मनुष्य श्रम, संकट, संताप सभी को भूल जाता है। आह! जीवन की मदिरा जो हमें विवश होकर पीनी पड़ी है, कितनी कड़वी है! कितनी! यह मदिरा उस मदिरा के नशे को उतार देगी, जीवन की दुःखदायिनी चेतना को विस्मृति के गर्त में गिराएगी तथा प्रबल दैव, दुर्दम काल, निर्मम कर्म और निर्दय नियति के क्रूर, कठोर, कुटिल आघातों से रक्षा करेगी। क्षीण, क्षुद्र, क्षणभंगुर, दुर्बल मानव के पास जग-जीवन की समस्त आधि-व्याधियों को यही एक महौषध है। मेरा हृदय कहता है कि आज इसकी तुझे आवश्यकता है। ले, इसे पान कर; और इस मद के उन्माद में अपने को, अपने दुख को, अपने दुखद समय को और समय के कठिन चक्र को भूल जा! ले, इसे पी, और इस मधु से अपना जीवन नवोल्लास, नूतनस्फूर्ति और नवल

उमंगों से भर। उफ़! किसे ज्ञात है कि यह दूसरों को मदोन्मत्त कर देनेवाला स्वयं कितने अवसादों का पुंज है! किसे मालूम है कि यह दूसरों को शीतलता प्रदान करनेवाला स्वयं कितनी भीषण ज्वाला में दग्ध हुआ करता है।

यह मेरे हृदय की मदिरा है। मत समझ, तू अकेले जलता है। तू जलता है, पर प्रभाव मुझपर पड़ता है। तू जलता है, मैं गलता हूँ। तू तपता है, मैं पिघलता हूँ। मैं भी शीतल मधु की खोज में आया था, पर तूने मुझे अपना हृदय दिया, हृदय की ज्वाला दी। यह मेरे हृदय की हाला तेरी ज्वाला से गल-पिघल-कर प्रवाहित हो उठी है। ले, इसे पीकर अपने हृदय की अग्नि को शांत कर! जो हृदय कल मधु का प्यासा था वही आज प्यास बुझाने वाला मधु हो गया है!

कवि का हृदय केवल कवि का हृदय नहीं है। उसकी हृदय-गोद में त्रिकाल और त्रिभुवन सोते रहते हैं, सृष्टि दुधमुँहीं बच्ची के समान क्रीड़ा करती है और प्रलय नटखट बालक के समान उत्पात मचाता है। उसका हृदयांगण गगन के गान, समीरण के हास्य और सागर के रोदन से प्रतिध्वनित हुआ करता है। उसके हृदय-मंदिर में जन्म-जीवन-मरण अविरत गति से नृत्य किया करते हैं। इस कारण कवि के हृदय के गलने के साथ ही आज समस्त विश्व मादक हाला से परिप्लावित हो उठा है। जल

और थल, गगन और पवन, सिंधु और वसुंधरा, स्वर्ग और नरक, जड़ और चेतन, निशा और दिवस, वन और उपवन, सर और सरिता, मिलन और विरह, प्रणय और संघर्ष, आशा और निराशा, जन्म और जीवन, काल और कर्म—सभी वस्तुएँ जिनका अस्तित्व इस विश्व में है, आज हाला-प्याला-मधुशाला-मय आभासित हो रही हैं !

मेरे प्यारे ! देख अखिल प्रकृति मधुशाला बनकर झूम रही है । आ, तुझे पुरुष बनाकर मैं माया-रूपिणी चंचला साक़ीबाला बनूँ । मैं अपने हाथों से प्याला भर-भरकर तेरे अधरों से लगाऊँ और तू अनंत काल तक अनंत पिपासा से इसे पीता चला जाए । न मैं पिलाने से थकूँ और न तू पीने से !·········

× × ×

भगवन् ! क्षमा ! क्षमा ! क्षमा ! अरे, अपने इस मृत मृत्तिका-पात्र को तेरे ज्योतिर्मय अधरों तक ले आने का दुःसाहस !······मेरा अभिमान क्षमा कर !······मेरे हाथ काँप रहे हैं !······मेरा पात्र हिल रहा है !····· मेरी मदिरा गिरी जाती है !······अरे, पद भी प्रकंपित हो रहे हैं !······शरीर के अंग-अंग के जोड़ खुल-से रहे हैं !······रोम-रोम सिहर रहा है ! अरे, मैं गिरी···गि···री !

× × ×

मेरी मदिरा तेरे चरणों में फिर भी चढ़ गई !···मैं संतुष्ट हूँ !···भक्त की मदिरा—विनम्र भक्त की मदिरा—भगवान के अधरों पर नहीं, चरणों में ही चढ़नी उचित है !······पर, ऊपर देखती हूँ !······यह क्या ?······तेरी आँखों में यह मतवालापन कैसा !······उन्मत्तता कैसी !······मस्ती कैसी !······तेरे अधर हिल क्यों रहे हैं ?······तू मुसकरा क्यों रहा है ?······क्या तू कुछ कह रहा है ?······क्या यही कि—

पीकर मदिरा मस्त हुआ तो
प्यार किया क्या मदिरा से !

क्या तू मेरी मदिरा पान कराने की अभिलाषा से ही प्रमत्त हो उठा ? धन्य तू और धन्य मैं !

पर तू मुझे उन मदभरे नयनों से न देख ! मेरा जी न जाने कैसे होने लगता है······ले, मैं आँखें मूँद रही हूँ ।

ओह ! उन मतवाली आँखों की ओर न देखा ही जाता है और न उनको बिना देखे रहा ही जाता है, उन्हें एक बार फिर से तो देख लूँ ।

पर अरे ! अरे ! वे मादक नयन किधर गए ? वह मादक दृश्य किधर गया ? उसे कहाँ ढूँढ़ूँ ? पर क्यों ?

× × ×

मैं उन्हें न ढूँढूँगी। उन मादक नयनों की एक चितवन मुझे अनंत काल तक उन्मत्त रक्खेगी। भक्त को चाहिए सिंधु की तृष्णा और बिंदु से संतोष!

तेरी मतवाली आँखों की हाला सदा मेरे पलकों के प्याले में छलका करे! और जो मुझे देखे वह तेरी मदिरा से मस्त हो उठे!

२७ अगस्त '३३*

तेरे मदिर नयनों के
निरंतर ध्यान में
'मैं'

---

* इस समय तक रुबाइयात उमर ख़ैयाम की समता पर मधुशाला में ७५ रुबाइयाँ थीं, दिसंबर, १९३३ तक, जब इनमें से कुछ 'सरस्वती' में प्रकाशित हुईं, इनकी संख्या १०८ तक पहुँची और मार्च '३४ तक ये अपने वर्तमान रूप में आईं। क्रम आदि में भी बहुत-से परिवर्तन किए गए।

—लेखक

मधुशाला की रुबाइयों की

अकारादि क्रम से प्रथम पंक्तियों की सूची

	प्रथम पंक्ति	क्रम संख्या
अ—	अधरों पर हो कोई भी रस	३२
	अपने अंगूरों-से तन में	७५
	अपने युग में सब को अनुपम ...	१२५
	अंधकार है मधुविक्रेता	३८
आ—	'आ आगे' कहकर कर पीछे ...	९३
	आज करे परहेज़ जगत, पर	५३
	आज मिला है अवसर तब फिर ...	६२
	आज सजीव बनालो, प्रेयसि	६३
उ—	उतर नशा जब उसका जाता ...	३७
	उस प्याले से प्यार मुझे जो	९९
ए—	एक तरह से सबका स्वागत	५९
	एक बरस में एक बार ही	२६

प्रथम पंक्ति		क्रम संख्या
एक समय छलका करती थी ...	...	११०
एक समय संतुष्ट बहुत था ...	...	१०८
औ—और चिता पर जाय उँडेला ...	...	८४
और रसां में स्वाद तभी तक ...	...	५२
क—कभी नहीं सुन पड़ता उसने ...	...	५७
कभी निराशा का तम घिरता ...	...	६२
करले, करले कंजूसी तू ...	...	७१
कल ! कल पर विश्वास न करता	...	६१
कहाँ गया वह स्वर्गिक साक़ी ...	...	१२४
कितनी आई और गई पी ...	...	११६
कितनी जल्दी रंग बदलती ...	...	११२
कितने अधरों को रक्खेगी ...	...	११७
कितने मर्म जता जाती है ...	...	१२७
किसी ओर मैं आँखें फेरूँ ...	...	३६
किसे न पीने की अभिलाषा ...	...	१२०
क़िस्मत में था ख़ाली खप्पर ...	...	६८
कुचल हसरतें कितनी अपनी ...	...	१३३
कोई भी हो शेख नमाज़ी ...	...	५१
क्या कहता, अब रह न गई है	...	६६

प्रथम पंक्ति		क्रम संख्या
क्या पीना निर्द्वंद न जब तक ...	...	६७
क्या मुझको आवश्यकता है ...	...	१०६
ग—गिरती जाती है दिन-प्रतिदिन ...	...	७६
घ—घन-श्यामल अंगूरलता से ...	...	४३
च—चलने ही चलने में कितना ...	...	७
चित्रकार बन साक़ी आया ...	...	४२
छ—छोटे से जीवन में कितना ...	...	६६
छोड़ा मैंने पंथ-मतों को ...	...	११४
ज—जगती की शीतल हाला-सी ...	...	१५
जलतरंग बजता, जब चुंबन ...	...	११
जला हृदय की भट्ठी खींची ...	...	१११
जितनी दिल की गहराई हो ...	...	१२८
जिन अधरों को छुए, बनादे ...	...	१२६
जिसने मुझको प्यासा रक्खा ...	...	१०३
जो हाला मैं चाह रहा था ...	...	६०
त—तन-प्याले से लगे सूखने ...	...	८१
तारक-मणियों से सज्जित नभ ...	...	३१
द—दर-दर घूम रहा था तब मैं ...	...	११८
दुतकारा मस्जिद ने मुझको ...	...	४६

प्रथम पंक्ति		क्रम संख्या
देख रहा हूँ अपने आगे ...	...	६१
देने को जो मुझे कहा था ...	...	१०७
दो दिन ही मधु मुझे पिलाकर ..	...	६५
ध—धर्मग्रंथ सब जला चुकी है ..	...	१७
धीर सुतों के हृदय-रक्त की ...	...	४५
ध्यान मान का, अपमानों का	...	७२
न—नहीं चाहता, आगे बढ़कर ...	...	१०४
नहीं जानता कौन, मनुज ...	...	२७
नाम अगर पूछे कोई तो ...	...	८५
प—पथिक बना मैं घूम रहा हूँ ...	...	४७
पाप अगर पीना, समदोषी ...	...	८८
पौधे आज बने हैं साक़ी ...	...	३३
प्याले-सा गढ़ हमें किसी ने ...	...	७४
प्यास तुझे, तो विश्व तपा ...	...	२
प्रति रसाल तरु साक़ी-सा है ...	...	३४
प्राप्य नहीं है यदि, तो क्यों यह	...	६५
प्रियतम ! तू मेरी हाला है ...	...	३
ब—बजी नफ़ीरी और नमाज़ी ...	...	४६
बजी न मंदिर में घड़ियाली ...	...	२०

प्रथम पंक्ति		क्रम संख्या
बड़े-बड़े नाज़ों से मैंने ...	...	१३५
बड़े-बड़े परिवार मिटें यों ...	...	२१
बनी रहें अंगूरलताएँ ...	...	२८
बनी मुरलिका साक़ी आई ...	...	४०
बने पुजारी प्रेमी साक़ी ...	...	१६
बहती हाला देखी, देखो ...	...	१६
बहुतेरे मदिरालय देखे ...	...	१०६
बार-बार मैंने आगे बढ़ ...	...	६०
बिना पिए जो मधुशाला को ...	...	२४
बुरा सदा कहलाया जग में ...	...	२३
बूँद-बूँद के हेतु कभी ...	...	११३
भ—भावुकता-अंगूरलता से ...	...	४
म—मतवालापन हाला से ले ...	...	१२२
मद, मदिरा, मधु, हाला सुन-सुन	...	१०५
मदिरा पीने की अभिलाषा ...	...	६
मदिरालय के द्वारा ठोंकता ...	...	१२३
मदिरालय जाने को घर से ...	...	६
मदिरालय में कब से बैठा ...	...	६७
मधुर भावनाओं की सुमधुर ...	...	५

प्रथम पंक्ति		क्रम संख्या
'मय' को करके शुद्ध दिया है...	...	१२६
मंद झकोरों के प्यालों में ...	...	३५
मिले न पर ललचा-ललचा क्यों	...	६६
मुख से तू अविरत कहता जा	...	८
मुझे पिलाने को लाए हो ...	...	६८
मुसल्मान औ' हिंदू हैं दो ...	...	५०
मेरी हाला में सबने पाई ...	...	१३१
मेरे अधरों पर हो अंतिम ...	...	८२
मेरे शव पर वह रोए, हो ...	...	८३
मेहँदी-रंजित मृदुल हथेली ...	...	१२
मैं मदिरालय के अंदर हूँ ...	...	११६
मृदु भावों के अंगूरों की ...	...	१
य—यदि इन अधरों से दो बातें ...	...	७७
यम आएगा लेने जब, तब ...	...	७६
यम आएगा साक़ी बनकर ...	...	८०
यम ले चलता है मुझको तो ...	...	८७
यह न समझना पिया हलाहल	...	११५
यह मदिरालय के आँसू हैं ...	...	१३२
यज्ञ अग्नि-सी धधक रही है ...	...	५४

प्रथम पंक्ति		क्रम संख्या
याद न आए दुखमय जीवन ...	...	७८
ल—लाल सुरा की धार लपट-सी ...	...	१४
लालायित अधरों से जिसने ...	...	१८
लिखी भाग्य में जितनी बस ...	...	७०
व—वह हाला कर शांत सके जो ...	...	१२१
वही वारुणी जो थी सागर ...	...	५६
वादक है मधु का विक्रेता ...	...	४१
विश्व ! तुम्हारे विषमय जीवन...	...	१३४
श—शांत सकी हो अब तक, साक़ी !	...	८६
श्रम, संकट संताप सभी तुम ...	...	५८
स—सकुशल समझो मुझको, सकुशल	...	२६
सजें न मस्जिद और नमाज़ी ...	...	४८
सब मिट जाएँ, बना रहेगा ...	...	२२
साक़ी के है पास तनिक-सी ...	...	१००
साक़ी ! जब थी पास तुम्हारे ...	...	१०१
साक़ी बन आती है प्रातः ...	...	३६
साक़ी ! मर-खपकर यदि कोई	...	१०२
सुन ! कलकल, छलछल मधुघट से	...	१०
सुमुखि ! तुम्हारा सुंदर मुख ही	...	६४

प्रथम पंक्ति		क्रम संख्या
सूर्य बने मधु का विक्रेता	... ...	३०
सोम-सुरा पुरखे पीते थे	... ...	५५
ह—हर जिह्वा पर देखी जाएगी	... ...	१३०
हराभरा रहता मदिरालय,	... ...	२५
हाथों में आने-आने में	... ...	६४
हाथों में आने से पहले	... ...	१३
हिमश्रेणी अंगूरलता-सी	... ...	४४
क्ष—क्षीण, क्षुद्र, क्षणभंगुर, दुर्बल	...	७३
ज्ञ—ज्ञात हुआ यम आने को है *	...	८६

* ये रुबाइयाँ हैं। रुबाई का शाब्दिक अर्थ है चौपाई, चौग़दा या चतुष्पदी। इनमें भी चार ही चार पद हैं। प्रत्येक पद पृष्ठ कम चौड़ा होने के कारण दो पंक्तियों में तोड़ दिया गया है। पढ़ने में प्रवाह का आनंद लेने के लिए यह आवश्यक है कि पाठक पंक्तियों पर न रुककर पदों पर रुकें।

मधुशाला

[१]

मृदु भावों के अंगूरों की
आज बना लाया हाला,
प्रियतम ! अपने ही हाथों से
आज पिलाऊँगा प्याला,
पहले भोग लगा लूँ तेरा,
फिर प्रसाद जग पाएगा;
सबसे पहले तेरा स्वागत
करती मेरी मधुशाला।

[२]

प्यास तुझे, तो विश्व तपा
संपूर्ण निकालूँगा हाला,
एक पाँव से साक़ी बनकर
नाचूँगा लेकर प्याला,
जीवन की मधुता तो तेरे
ऊपर कबका वार चुका;
आज निछावर कर दूँगा मैं
तुझपर जग की मधुशाला।

[३]

प्रियतम ! तू मेरी हाला है,
मैं तेरा प्यासा प्याला,
अपनेको मुझमें भरकर तू
बनता है पीनेवाला,
मैं तुझको छक छलका करता,
मस्त मुझे पी तू होता;
एक दूसरे को हम दोनों
आज परस्पर मधुशाला।

[४]

भावुकता-अंगूर लता से
खींच कल्पना की हाला,
कवि बनकर है साक़ी आया
भरकर कविता का प्याला,
कभी न कणभर ख़ाली होगा,
लाख पिएँ, दो लाख पिएँ!
पाठकगण हैं पीनेवाले,
पुस्तक मेरी मधुशाला।

]

मधुर भावनाओं की सुमधुर
नित्य बनाता हूँ हाला,
भरता हूँ इस मधु से अपने
ही उर का प्यासा प्याला,
उठा कल्पना के हाथों से
स्वयं इसे पी जाता हूँ;
अपने ही में हूँ मैं साक़ी,
पीनेवाला, मधुशाला।

[६]

मदिरालय जाने को घर से
चलता है पीनेवाला,
'किस पथ से जाऊँ ?' असमंजस
में है वह भोलाभाला,
अलग-अलग पथ बतलाते सब,
पर मैं यह बतलाता हूँ—
'राह पकड़ तू एक चलाचल,
पा जाएगा मधुशाला।'

[७]

चलने ही चलने में कितना
जीवन, हाय, बिता डाला !
'दूर अभी है', पर, कहता है
हर पथ बतलानेवाला,
हिम्मत है न बढ़ूँ आगे को,
साहस है न फिरूँ पीछे;
किंकर्तव्यविमूढ़ मुझे कर
दूर खड़ी है मधुशाला।

[८]

मुख से तू अविरत कहता जा
मधु, मदिरा, मादक हाला,
हाथों में अनुभव करता जा
एक ललित कल्पित प्याला,
ध्यान किएजा मन में सुमधुर,
सुखकर, सुंदर साक़ी का
और बढ़ाचल, पथिक, न तुझको
दूर लगेगी मधुशाला।

[९]

मदिरा पीने की अभिलाषा
ही बन जब जाए हाला,
अधरों की आतुरता में ही
जब आभासित हो प्याला,
बने ध्यान ही करते-करते
जब साक़ी साकार, सखे !
रहे न हाला, प्याला, साक़ी,
तुझे मिलेगी मधुशाला !

[१०]

सुन ! कलकल, छलछल मधु-
घट से गिरती प्यालों में हाला,
सुन ! रुनझुन, रुनझुन चल
वितरण करती मधु साक़ीबाला,
बस आ पहुँचे, दूर नहीं कुछ,
चार क़दम अब चलना है,
चहक रहे, सुन, पीनेवाले,
महक रही, ले, मधुशाला !

[११]

जलतरंग बजता, जब चुंबन
करता प्याले को प्याला,
वीणा झंकृत होती, चलती
जब रुनझुन साक़ीबाला,
डाँट-डपट मधुविक्रेता की
ध्वनित पखावज करती है;
मधुरव से मधु की मादकता
और बढ़ाती मधुशाला।

[१२]

मेहँदी-रंजित मृदुल हथेली
में माणिक मधु का प्याला,
अंगूरी अवगुंठन डाले
स्वर्ण वर्ण साक़ीबाला,
पाग बैंजनी, जामा नीला
डाट डटे पीनेवाले;
इंद्रधनुष से होड़ रही ले
आज रँगीली मधुशाला।

[१३]

हाथों में आने से पहले
नाज़ दिखाएगा प्याला,
अधरों पर आने से पहले
अदा दिखाएगी हाला,
बहुतेरे इन्कार करेगा
साक़ी आने से पहले,
पथिक! न घबरा जाना, पहले
मान करेगी मधुशाला।

[१४]

लाल सुरा की धार लपट-सी,
कह न इसे देना ज्वाला,
फेनिल मदिरा है, मत इसको
कह देना उर का छाला,
दर्द नशा है इस मदिरा का,
विगतस्मृतियाँ साक़ी हैं,
पीड़ा में आनंद जिसे हो,
आए मेरी मधुशाला।

[१५]

जगती की शीतल हाला-सी
है न, पथिक, मेरी हाला,
जगती के ठंडे प्याले-सा
है न, पथिक, मेरा प्याला,
ज्वाल-सुरा जलते प्याले में
दग्ध हृदय की कविता है;
जलने से भयभीत न जो हो,
आए मेरी मधुशाला।

[१६]

बहती हाला देखी, देखो,
लपट उठाती अब हाला,
शीतल करने के बदले, दे
होठ जला, देखो प्याला ;
होठ नहीं सब देह जले पर
पीने को दो बूँद मिले,
ऐसे मधु के दीवानों को
आज बुलाती मधुशाला।

[१७]

धर्म ग्रंथ सब जला चुकी है
जिसके अंतर की ज्वाला,
मंदिर, मस्जिद, गिरजे—सबको
तोड़ चुका जो मतवाला,
पंडित, मोमिन, पादरियों के
फंदों को जो काट चुका,
कर सकती है आज उसीका
स्वागत मेरी मधुशाला।

[१८]

लालायित अधरों से जिसने,
हाय, नहीं चूमी हाला,
हर्ष-विकंपित कर से जिसने,
हा, न छुआ मधु का प्याला,
हाथ पकड़ लज्जित साक़ी का
पास नहीं जिसने खींचा,
व्यर्थ सुखा डाली जीवन की
उसने मधुमय मधुशाला।

[१६]

बने पुजारी प्रेमी साक़ी,
गंगाजल, पावन हाला,
रहे फेरता अविरत गति से
मधु के प्यालों की माला,
'और लिए जा, और पिए जा'—
इसी मंत्र का जाप करे,
मैं शिव की प्रतिमा बन बैठूँ,
मंदिर हो यह मधुशाला।

[२०]

बजी न मंदिर में घड़ियाली,
चढ़ी न प्रतिमा पर माला,
बैठा अपने भवन मुअज़्ज़िन
देकर मस्जिद में ताला,
लुटे ख़ज़ाने नरपतियों के,
गिरीं गढ़ों की दीवारें,
रहें मुबारक पीनेवाले,
खुली रही यह मधुशाला।

[२१]

बड़े-बड़े परिवार मिटें यों,
एक न हो रोनेवाला,
हो जाएँ सुनसान महल वे,
जहाँ थिरकतीं सुरबाला,
राज्य उलट जाएँ, भूपों की
भाग्य-सुलक्ष्मी सो जाए,
जमे रहेंगे पीनेवाले,
जगा करेगी मधुशाला।

[२२]

सब मिट जाएँ, बना रहेगा
सुंदर साक़ी, यम काला,
सूखें सब रस बने रहेंगे
किंतु हलाहल औ' हाला,
धूमधाम औ' चहलपहल के
स्थान सभी सुनसान बनें,
जगा करेगा अविरत मरघट,
जगा करेगी मधुशाला।

[२३]

बुरा सदा कहलाया जग में
बाँका, मद-चंचल प्याला,
छैल छबीला, रसिया साक़ी,
अ ल बे ला पी ने वा ला;
पटे कहाँ से, मधुशाला औ'
जग की ठीक न जोड़ी है,
जग जर्जर प्रतिपल-प्रतिक्षण पर,
नित्य नवेली मधुशाला।

[२४]

बिना पिए जो मधुशाला को
बुरा कहे, वह मतवाला,
पी लेने पर तो जाएगा
पड़ उसके मुँह पर ताला,
दास-द्रोहियों दोनों में है
जीत सुरा की, प्याले की,
विश्वविजयिनी बनकर जग में
आई मेरी मधुशाला!

[२५]

हराभरा रहता मदिरालय,
जग पर पड़ जाए पाला,
वहाँ मुहर्रम का तम छाए
यहाँ होलिका की ज्वाला,
स्वर्गलोक से सीधी उतरी
वसुधा पर, दुख क्या जाने!
पढ़े मर्सिया दुनिया सारी,
ईद मनाती मधुशाला!

[२६]

एक बरस में एक बार ही
जगती होली की ज्वाला,
एक बार ही लगती बाज़ी,
जलती दीपों की माला;
दुनियावालो, किंतु, किसी दिन
आ मदिरालय में देखो,
दिन को होली, रात दिवाली,
रोज़ मनाती मधुशाला!

[२७]

नहीं जानता कौन, मनुज
आया बनकर पीनेवाला?
कौन अपरिचित उस साक़ी से,
जिसने दूध पिला पाला?
जीवन पाकर मानव, पीकर
मस्त रहे, इस कारण ही,
जग में आकर सबसे पहले
पाई उसने मधुशाला।

[२८

बनी रहें अंगूरलताएँ
जिनसे मिलती है हाला,
बनी रहे वह मिट्टी जिससे
बनता है मधु का प्याला,
बनी रहे वह मदिर पिपासा
तृप्त न जो होना जाने,
बने रहें ये पीनेवाले,
बनी रहे यह मधुशाला !

[२९

सकुशल समझो मुझको, सकुशल
रहती यदि साक़ीबाला,
मंगल और अमंगल समझे
मस्ती में क्या मतवाला !
मित्रो ! मेरी क्षेम न पूछो
आकर, पर मधुशाला की,
कहा करो 'जय राम' न मिलकर,
कहा करो 'जय मधुशाला' !

[३०]

सूर्य बने मधु का विक्रेता,
सिंधु बने घट, जल, हाला,
बादल बन-बन आए साक़ी,
भूमि बने मधु का प्याला,
झड़ी लगाकर बरसे मदिरा
रिमझिम, रिमझिम, रिमझिम कर,
वेलि, विटप, तृण बन मैं पीऊँ,
वर्षाऋृतु हो मधुशाला।

[३१]

तारक मणियों से सज्जित नभ
बन जाए मधु का प्याला,
सीधा करके भर दी जाए
इसमें सागर-जल हाला,
मत्त समीरण साक़ी बनकर
अधरों पर छलका जाए,
फैले हों जो सागरतट-से
विश्व बने यह मधुशाला।

[३२]

अधरों पर हो कोई भी रस,
जिह्वा पर लगती हाला,
भाजन हो कोई हाथों में,
लगता रक्खा है प्याला,
हर सूरत साक़ी की सूरत
में परिवर्तित हो जाती,
आँखों के आगे हो कुछ भी
आँखों में है मधुशाला।

[३३]

पौधे आज बने हैं साक़ी
ले-ले फूलों का प्याला,
भरी हुई है जिनके अंदर
परिमल-मिश्रित रस-हाला,
माँग-माँगकर भ्रमरों के दल
रस की मदिरा पीते हैं,
झूम-झपक मद-झंपित होते
उपवन क्या है, मधुशाला!

[३४]

प्रति रसाल तरु साक़ी - सा है,
प्रति मंजरिका, मधुप्याला,
छलक रही है जिसके बाहर
मादक सौरभ की हाला,
छक जिसको मतवाली कोयल
कूक रही डाली-डाली;
हर मधुऋतु में अमराई में
जग उठती है मधुशाला।

[३५]

मंद झकोरों के प्यालों में
मधुऋतु सौरभ की हाला
भर-भरकर है अनिल पिलाता
बनकर मधुमद - मतवाला,
हरे-हरे नव पल्लव तरुगण,
नूतन डालें, वल्लरियाँ
छक-छक, झुक-झुक झूम रही हैं,
मधुवन में है मधुशाला।

[३६

साक़ी बन आती है प्रातः
जब अरुणा ऊषा बाला,
तारक-मणि-मंडित चादर दे
मोल धरा लेती हाला,
ऊषा कर-किरणों से जिसको
पी, खग पागल हो गाते,
प्रति प्रभात में पूर्ण प्रकृति में
मुखरित होती मधुशाला।

[३७]

उतर नशा जब उसका जाता,
आती है संध्या-बाला,
बड़ी पुरानी, बड़ी नशीली
नित्य ढला जाती हाला,
जीवन के संताप शोक सब
इसको पीकर मिट जाते,
सुरा-सुप्त होते मद-लोभी,
जाग्रत रहती मधुशाला।

[३८]

अंधकार है मधुविक्रेता,
सुंदर साक़ी, शशिबाला;
कर-किरणों में जो छलकाती
चलती ज्योत्स्ना की हाला,
पीकर जिसको दीप्ति-चेतना
खो, लेने लगते झपकी,
तारकदल-से पीनेवाले,
रात नहीं है, मधुशाला।

[३९]

किसी ओर मैं आँखें फेरूँ,
दिखलाई देती हाला;
किसी ओर मैं आँखें फेरूँ,
दिखलाई देता प्याला।
किसी ओर मैं देखूँ, मुझको
दिखलाई देता साक़ी,
किसी ओर देखूँ, दिखलाई
पड़ती मुझको मधुशाला।

[४०]

बनी मुरलिका साक़ी आई
साथ लिए कर में प्याला,
जिनमें वह लहराती आई
मादक स्वरलहरी - हाला,
योगिराज के पास पहुँचकर
उन्हें बनाया नटनागर!
देखो कैसों - कैसों को है
नाच नचाती मधुशाला।

[४१]

वादक है मधु का विक्रेता,
लाया स्वर - सुमधुर - हाला,
रागिनियाँ बन साक़ी आईं
भरकर तारों का प्याला,
विक्रेता के संकेतों पर
दौड़ लयों, आलापों में
पिला रही हैं श्रोतागण को,
झंकृत वीणा मधुशाला।

[४२]

चित्रकार बन साक़ी आया
लिए तूलिका का प्याला,
जिसमें भर वह पिला रहा है
बहुरंगी मादक हाला,
मन के चित्र जिसे पी-पीकर
रंग-बिरंगे हो जाते,
चित्रपटी पर नाच रही है
एक मनोहर मधुशाला।

[४३]

घन-श्यामल अंगूरलता से
खिंच-खिंच यह आती हाला,
अरुण कमल कोमल-कलियों की
प्याली, फूलों का प्याला,
लोल हिलोरें साक़ी बन-बन
माणिक मधु से भर जातीं,
हंस मत्त होते पी-पीकर
मानसरोवर मधुशाला।

[४४]

हिमश्रेणी अंगूरलता-सी
फैली, हिम जल है हाला,
गहरी नदियाँ साक़ी बनकर,
भरकर लहरों का प्याला
कोमल कूल-करों में अपने
छलकाती निशिदिन चलतीं,
पीकर खेत खड़े लहराते,
भारत पावन मधुशाला।

[४५]

धीर सुतों के हृदय-रक्त की
आज बना रक्तिम हाला,
वीर सुतों के वर शीशों का
हाथों में लेकर प्याला,
अति उदार दानी साक़ी है
आज बनी भारतमाता,
स्वतंत्रता है तृषित कालिका,
बलिवेदी है मधुशाला।

[४६]

दुतकारा मस्जिद ने मुझको
कहकर 'है पीनेवाला',
ठुकराया ठाकुरद्वारे ने
देख हथेली पर प्याला,
कहाँ ठिकाना मिलता जग में
भला अभागे काफ़िर को!
शरणस्थल बनकर न मुझे यदि
अपना लेती मधुशाला।

[४७]

पथिक बना मैं घूम रहा हूँ
सभी जगह मिलती हाला,
सभी जगह मिलता है साक़ी,
सभी जगह मिलता प्याला,
मुझे ठहरने का हे मित्रो!
कष्ट नहीं कुछ भी होता,
मिले न मंदिर, मिले न मस्जिद,
मिल जाती है मधुशाला।

[४८]

सजें न मस्जिद और नमाज़ी,
कहता है अल्लाताला,
सजधजकर, पर, साक़ी आता,
बनठनकर पीनेवाला,
शेख़ ! कहाँ तुलना हो सकती
मस्जिद की मदिरालय से !
चिर विधवा है मस्जिद तेरी,
सदा - सुहागिन मधुशाला !

[४६]

बजी नफ़ीरी और नमाज़ा
भूल गया अल्लाताला,
गाज गिरी, पर ध्यान-सुरा में
मग्न रहा पीनेवाला ;
शेख़ ! बुरा मत मानो इसको,
साफ़ कहूँ तो मस्जिद को
अभी युगों तक सिखलाएगी
ध्यान लगाना मधुशाला !

[५०]

मुसल्मान औ' हिंदू हैं दो
एक, मगर, उनका प्याला,
एक, मगर, उनका मदिरालय,
एक, मगर, उनकी हाला,
दोनों रहते एक न जब तक
मस्जिद - मंदिर में जाते,
लड़वाते हैं मस्जिद-मंदिर,
मेल कराती मधुशाला !

[५१]

कोई भी हो शेख़ नमाज़ी
या पंडित जपता माला,
बैर भाव चाहे जितना हो
मदिरा से रखनेवाला,
एक बार बस मधुशाला के
आगे से होकर जाए
देखूँ कैसे थाम न लेती
दामन उसका मधुशाला ।

[५२]

और रसों में स्वाद तभी तक
दूर जभी तक है हाला,
इतरा लें सब पात्र न जब तक
आगे आता है प्याला,
करलो पूजा, शेख़ - पुजारी
तब तक मस्जिद-मंदिर में,
घूँघट का पट खोल न जब तक
झाँक रही है मधुशाला।

[५३]

आज करे परहेज़ जगत, पर
कल पीनी होगी हाला,
आज करे इन्कार जगत, पर
कल होगा लेना प्याला,
होने दो पैदा मद का महमूद
जगत में कोई फिर,
जहाँ अभी हैं मंदिर-मस्जिद
वहाँ बनेगी मधुशाला।

[५४]

यज्ञ-अग्नि-सी धधक रही है
मधु की भट्टी की ज्वाला,
ऋषि-सा ध्यान लगा बैठा है
हर मदिरा पीनेवाला,
मुनि कन्याओं-सी मधुघट ले
फिरतीं साकीबालाएँ,
किसी तपोवन से क्या कम है
मेरी पावन मधुशाला!

[५५]

सोम-सुरा पुरखे पीते थे,
हम कहते उसको हाला,
द्रोणकलश जिसको कहते थे,
आज वही मधुघट आला,
वेद-विहित यह रस्म न छोड़ो,
वेदों के ठेकेदारो!
युग-युग से है पुजती आई,
नई नहीं है मधुशाला।

[५६]

वही वारुणी जो थी सागर
मथकर निकली अब हाला,
रंभा की संतान जगत में
कहलाती, 'सा की बा ला',
देव-अदेव जिसे ले आए
संत - महंत मिटा देंगे!
किसमें कितना दमखम इसको
ख़ूब समझती मधुशाला।

[५७]

कभी नहीं सुन पड़ता, 'उसने,
हा, छू दी मेरी हाला!'
कभी न कोई कहता 'मेरा,
हाय छुआ 'उसनें प्याला।'
भूसुर भंगी सभी यहाँ पर
साथ बैठकर पीते हैं,
सौ सुधारकों का करती है
काम अकेली मधुशाला!

[५८]

श्रम, संकट, संताप सभी तुम
भूला करते पी हाला,
सबक़ बड़ा तुम सीख चुके यदि
सीखा रहना मतवाला,
व्यर्थ बने जाते हो हरिजन
तुम तो मधुजन ही अच्छे
ठुकराते हरि - मंदिरवाले,
पलक बिछाती मधुशाला!

[५६]

एक तरह से सबका स्वागत
करती है साक़ीबाला,
अज्ञ-विज्ञ में है क्या अंतर
होजाने पर मतवाला?
रंक-राव में भेद हुआ
कभी नहीं मदिरालय
साम्यवाद की प्रथम प्रचारक
है यह मेरी मधुशाला!

[६०]

बार-बार मैंने आगे बढ़
आज नहीं माँगी हाला,
समझ न लेना इससे मुझको
साधारण पीनेवाला,
हो तो लेनेदो, ऐ साक़ी!
दूर प्रथम संकोचों को,
मेरे ही स्वर से फिर सारी
गूँज उठेगी मधुशाला।

[६१]

कल? कल पर विश्वास न
करता है कोई पीनेवाला,
हो सकते कल कर जड़ जिनसे
ले-ले आज पिया प्याला!
आज हाथ में था. वह खोया,
कल का कौन भरोसा है?
कल की हो न तुझे मधुशाला
काल कुटिल की मधुशाला!

[६२]

आज मिला है अवसर, तब फिर
क्यों न छकूँ जी भर हाला,
आज मिला अवसर, तब फिर
क्यों ढाल न लूँ जी भर प्याला !
छेड़छाड़ अपने साक़ी से
आज न क्यों जी भर कर लूँ,
एक बार ही तो मिलनी है
जीवन की यह मधुशाला !

[६३]

आज सजीव बनालो, प्रेयसि !
अपने अधरों का प्याला,
भर लो, भर लो, भर लो इसमें
यौवन - मधुरस की हाला,
और लगा मेरे अधरों से
भूल हटाना तुम जाओ,
अथक बनूँ मैं पीनेवाला,
खुले प्रणय की मधुशाला।

[६४]

सुमुखि ! तुम्हारा सुंदर मुख ही
माणिक मदिरा का प्याला,
छलक रही है जिसमें छलछल
रूप - मधुर - मादक - हाला,
मैं ही साक़ी बनता, मैं ही
पीनेवाला बनता हूँ;
जहाँ कहीं मिल बैठे हम-तुम
वहीं गई हो मधुशाला !

[६५]

दो दिन ही मधु मुझे पिलाकर
ऊब उठी साक़ीबाला,
भरकर अब खिसका देती है
बस मेरे आगे प्याला,
नाज़, अदा, अंदाज़ों से अब,
हाय, पिलाना दूर हुआ !
अब तो कर देती है केवल
फ़र्ज़-अदाई मधुशाला !

[६६]

छोटेसे जीवन में कितना
प्यार करूँ, पीलूँ हाला !
आने के ही साथ जगत में
कहलाया, 'जा ने वाला'
स्वागत के ही साथ विदा की
होती देखी तैयारी !
बंद लगी होने खुलते ही
मेरी जीवन - मधुशाला !

[६७]

क्या पीना निर्द्वंद न जब तक
ढाला प्यालों पर प्याला,
क्या पीना, निश्चिंत न होकर
पी जब तक मादक हाला,
खोने का भय, हाय, लगा है
पाने के सुख के पीछे,
मिलने का आनंद न देती
मिलकरके भी मधुशाला !

[६८]

मुझे पिलाने को लाए हो
इतनी थोड़ीसी हाला !
मुझे पिलाने को लाए हो
एक यही छिछला प्याला !
इतना पी जीने से अच्छा
सागर की ले प्यास मरूँ;
सिंधु-तृषा दी किसने रचकर
चुल्लू भर की मधुशाला

[६९]

क्या कहता, अब रह न गई है
तेरे भाजन में हाला !
क्या कहता है, अब न चलेगी
मादक प्यालों की माला !
थोड़ा पीकर प्यास बढ़ी तो
शेष नहीं कुछ पीने को;
प्यास बुझाने को बुलवाकर
प्यास बढ़ाती मधुशाला !

[७०]

लिखी भाग्य में जितनी बस
उतनी ही पाएगा हाला,
लिखा भाग्य में जैसा बस
वैसा ही पाएगा प्याला,
लाख पटक तू हाथ-पाँव पर
इससे कब कुछ होने का?
लिखी भाग्य में तेरे जो बस
वही मिलेगी मधुशाला।

[७१]

करले, करले कंजूसी तू
मुझको देने में हाला,
देले, देले तू मुझको बस
यह टूटा-फूटा प्याला,
मैं तो सब्र इसीपर करता
तू पीछे पछताएगा,
जब न रहूँगा मैं तब मेरी
याद करेगी मधुशाला।

[७२]

ध्यान मान का, अपमानों का
छोड़ दिया, जब पी हाला,
गौरव भूला, आया कर में
जब से मिट्टी का प्याला,
साक़ी की अंदाज़भरी
झिड़की में क्या अपमान धरा?
दुनिया भर की ठोकर खाकर
पाई मैंने मधुशाला!

[७३]

क्षीण, क्षुद्र, क्षण-भंगुर, दुर्बल
मानव मिट्टी का प्याला,
भरी हुई है जिसके अंदर
कटु-मधु जीवन की हाला,
मृत्यु बनी है निर्दय साक़ी
अपने शत-शत कर फैला,
काल प्रबल है पीनेवाला,
संसृति है यह मधुशाला!

[७४]

प्याले-सा गढ़ हमें किसीने
भरदी जीवन की हाला,
नशा न भाया, ढाला हमने
ले-लेकर मधु का प्याला,
जब जीवन का दर्द उभरता,
उसे दबाते प्याले से;
जगती के पहले साक़ी से
युद्ध रही कर मधुशाला!

[७५]

अपने अंगूरों-से तन में
हमने भरली है हाला,
क्या कहते हो, शेख़, नरक में
हमें तपाएगी ज्वाला!
तब तो मदिरा ख़ूब खिंचेगी
और पिएगा भी कोई,
हमें नरक की ज्वाला में भी
दीख पड़ेगी मधुशाला!

[७६]

यम आएगा लेने जब, तब
खूब चलेंगे पी हाला,
पीड़ा, संकट, कष्ट नरक के
क्या समझेगा मतवाला ?
क्रूर, कठोर, कुटिल, कुविचारी
अन्यायी यमराजों के
डंडों की जब मार पड़ेगी,
आड़ करेगी मधुशाला।

[७७]

यदि इन अधरों से दो बातें
प्रेमभरी करती हाला,
यदि इन सूने हाथों का जी
पल भर बहलाता प्याला,
हानि बता जग तेरी क्या है ?
व्यर्थ मुझे बदनाम न कर,
मेरे टूटे दिल का है बस
एक खिलौना मधुशाला !

[७८]

याद न आए दुखमय जीवन,
इससे पी लेता हाला,
जग चिंताओं से रहने को
मुक्त, उठा लेता प्याला;
शौक, साध के और स्वाद के
हेतु पिआ जग करता है,
पर मैं वह रोगी हूँ जिसकी
एक दवा है मधुशाला!

[७९]

गिरती जाती है दिन-प्रतिदिन,
प्रणयिनि! प्राणों की हाला,
भग्न हुआ जाता दिन-प्रतिदिन,
सुभगे! मेरा तन-प्याला,
रूठ रहा है मुझसे, रूपसि!
दिन-दिन यौवन का साक़ी,
सूख रही है दिन-दिन, सुंदरि!
मेरी जीवन-मधुशाला।

[८०]

यम आएगा साक़ी बनकर
साथ लिए काली हाला,
पी न होश में फिर आएगा
सुरा-विसुध यह मतवाला !
यह अंतिम बेहोशी, अंतिम
साक़ी, अंतिम प्याला है,
पथिक ! प्यार से पीना इसको
फिर न मिलेगी मधुशाला।

[८१]

तन-प्याले से लगे सूखने,
संगिनि ! जब जीवन-हाला,
पात्र गरल का ले जब अंतिम
साक़ी हो आनेवाला,
हाथ परस भूले प्याले का,
स्वाद-सुरा जिह्वा भूले,
कानों में तुम कहती रहना
मधुकण, प्याला, मधुशाला !

[८२]

मेरे अधरों पर हो अंतिम
वस्तु न तुलसीदल, प्याला,
मेरी जिह्वा पर हो अंतिम
वस्तु न गंगाजल, हाला,
मेरे शव के पीछे चलने-
वालो, याद इसे रखना—
'राम नाम है सत्य' न कहना,
कहना 'सच्ची मधुशाला'!

[८३] ✓

मेरे शव पर वह रोए, हो
जिसके आँसू में हाला,
आह भरे वह, जो हो सुरभित
मदिरा पीकर मतवाला,
दें मुझको वे कंधा, जिनके
पद मद-डगमग होते हों,
और जलूँ उस ठौर जहाँ पर
कभी रही हो मधुशाला!

[८४]

और चिता पर जाय उँडेला
पात्र न घृत का, पर प्याला,
घंट बँधे अंगूरलता में
किंतु न जल हो, पर हाला,
प्राणप्रिये ! यदि श्राद्ध करो तुम
मेरा तो ऐसे करना—
पीनेवालों को बुलवाकर,
खुलवा देना मधुशाला !

[८५]

नाम अगर पूछे कोई तो
कहना बस पीनेवाला,
काम, ढालना और ढलाना,
सबको मदिरा का प्याला,
जाति, प्रिये, पूछे यदि कोई,
कह देना दीवानों की,
धर्म बताना, प्यालों की ले
माला जपता मधुशाला !

[८६]

ज्ञात हुआ यम आने को है
ले अपनी काली हाला,
पंडित अपनी पोथी भूला,
साधू भूल गया माला
और पुजारी भूला पूजा,
ज्ञान सभी ज्ञानी भूला,
किंतु न भूला मरकरके भी
पीनेवाला मधुशाला!

[८७]

यम ले चलता है मुझको तो
चलने दे लेकर हाला,
चलने दे साक़ी को मेरे
साथ लिए कर में प्याला,
स्वर्ग, नरक या जहाँ कहीं भी
तेरा जी हो लेकर चल,
ठौर सभी है एक तरह के
साथ रहे यदि मधुशाला।

[८८]

पाप अगर पीना समदोषी
तो तीनों — साक़ीबाला,
नित्य पिलानेवाला प्याला,
पी जानेवाली हाला,
साथ इन्हें भी ले चल मेरे,
न्याय यही बतलाता है,
क़ैद जहाँ मैं हूँ की जाए
क़ैद वहीं पर मधुशाला !

[८९]

शांत सकी हो अब तक, साक़ी !
पीकर किस उर की ज्वाला,
'और, और' की रटन लगाता
जाता हर पीनेवाला,
कितनी इच्छाएँ हर जाने-
वाला छोड़ यहाँ जाता !
कितने अरमानों की बनकर
क़ब्र खड़ी है, मधुशाला !

[६०]

जो हाला मैं चाह रहा था,
वह न मिली मुझको हाला,
जो प्याला मैं माँग रहा था,
वह न मिला मुझको प्याला,
जिस साक़ी के पीछे मैं था
दीवाना, न मिला साक़ी,
जिसके पीछे था मैं पागल,
हा! न मिली वह मधुशाला।

[६१]

देख रहा हूँ अपने आगे
कब से माणिक-सी हाला,
देख रहा हूँ अपने आगे
कब से कंचन का प्याला,
'बस अब पाया!'—कह-कह
कबसे दौड़ रहा इसके पीछे,
किंतु रही, हा, दूर क्षितिज-सी
मुझसे मेरी मधुशाला!

[६२]

कभी निराशा का तम घिरता,
छिप जाता मधु का प्याला,
छिप जाती मदिरा की आभा,
छिप जाती साक़ीबाला,
कभी उजाला आशा करके
प्याला फिर चमका जाती,
आँखमिचौनी खेल रही है
मुझसे मेरी मधुशाला।

[६३]

'आ आगे' कहकर कर पीछे
कर लेती साक़ीबाला,
होठ लगाने को कहकर हर
बार हटा लेती प्याला;
नहीं मुझे मालूम कहाँ तक
यह मुझको ले जाएगी,
बढ़ा-बढ़ाकर मुझको आगे,
पीछे हटती मधुशाला।

[६४]

हाथों में आने-आने में, हाय,
फिसल जाता प्याला,
अधरों पर आने-आने में,
हाय, ढुलक जाती हाला;
दुनियावालो ! आकर मेरी
क़िस्मत की ख़ूबी देखो,
रह - रह जाती है बस मुझको
मिलते - मिलते मधुशाला !

[६५]

प्राप्य नहीं है यदि, तो क्यों यह
लुप्त न हो जाती हाला ?
प्राप्य नहीं है यदि, तो क्यों यह
लुप्त न हो जाता प्याला ?
दूर न इतनी हिम्मत हारूँ
पास न इतनी पा जाऊँ,
व्यर्थ मुझे दौड़ाती मरु में
मृगजल बनकर मधुशाला !

[९६]

मिले न पर ललचा-ललचा क्यों
आकुल करती है हाला ?
मिले न पर तरसा-तरसाकर
क्यों तड़पाता है प्याला ?
हाय ! नियति की विषम लेखनी
मस्तक पर यह खोद गई—
'दूर रहेगी मधु की धारा,
पास रहेगी मधुशाला !'

[९७]

मदिरालय में कब से बैठा,
पी न मगर पाया हाला,
यत्न सहित भरता हूँ, कोई
किंतु उलट देता प्याला;
मानव-बल के आगे निर्बल
भाग्य, सुना विद्यालय में,
भाग्य प्रबल, मानव निर्बल का
पाठ पढ़ाती मधुशाला।

[६८]

क़िस्मत में था खाली खप्पर,
खोज रहा था मैं प्याला!
ढूँढ रहा था मैं मृगनयनी,
क़िस्मत में थी मृगछाला!
किसने अपना भाग्य समझने
में मुझ-सा धोखा खाया?
क़िस्मत में था अवघट मरघट,
ढूँढ रहा था मधुशाला!

[६६]

उस प्याले से प्यार मुझे जो
दूर हथेली से प्याला,
उस हाला से चाव मुझे है
दूर अधर से जो हाला;
प्यार नहीं पा जाने में है,
पाने के अरमानों में!
पा जाता तब, हाय, न इतनी
प्यारी लगती मधुशाला!

[१००]

साक़ी के है पास तनिकसी
श्री, सुख, संपति की हाला,
सब जग है पीने को आतुर
ले - ले क़िस्मत का प्याला,
रेल-ठेल कुछ आगे बढ़ते,
बहुतेरे दबकर मरते,
जीवन का संघर्ष नहीं है,
भीड़भरी है मधुशाला !

[१०१]

साक़ी ! जब थी पास तुम्हारे
इतनी थोड़ी-सी हाला !
क्यों पीने की अभिलाषा से
विश्व किया सब मतवाला ?
हम पिस-पिसकर मरते हैं,
तुम छिप-छिपकर मुसकाते हो !
हाय ! हमारी पीड़ा से है
क्रीड़ा करती मधुशाला !

[१०२]

साक़ी मर-खपकर यदि कोई
आगे कर पाया प्याला,
पी पाया केवल दो बूँदों
से न अधिक तेरी हाला !
जीवन भर का, हाय, परिश्रम
लूट लिया दो बूँदों ने !
भोले मानव को ठगने के
हेतु बनी है मधुशाला !

[१०३]

जिसने मुझको प्यासा रक्खा,
बनी रहे वह भी हाला !
जिसने जीवन भर दौड़ाया,
बना रहे वह भी प्याला !
मतवालों की जिह्वा से हैं
कभी निकलते शाप नहीं,
दुखी बनाया जिसने मुझको,
सुखी रहे वह मधुशाला !

[१०४]

नहीं चाहता, आगे बढ़कर
छीनूँ औरों की हाला,
नहीं चाहता, धक्के देकर
छीनूँ औरों का प्याला,
साक़ी ! मेरी ओर न देखो,
मुझको तनिक मलाल नहीं,
इतना ही क्या कम आँखों से
देख रहा हूँ मधुशाला !

[१०५]

मद, मदिरा, मधु, हाला सुन सुन-
कर ही जब हूँ मतवाला,
क्या गति होगी अधरों के जब
नीचे आएगा प्याला !
साक़ी ! मेरे पास न आना
मैं पागल हो जाऊँगा !
प्यासा ही मैं मस्त, मुबारक
रहे तुम्हींको मधुशाला।

[१०६]

क्या मुझको आवश्यकता है
साक़ी से माँगूँ हाला ?
क्या मुझको आवश्यकता है
साक़ी से चाहूँ प्याला ?
पीकर मदिरा मस्त हुआ तो
प्यार किया क्या मदिरा से !
मैं तो पागल हो उठता हूँ
सुन लेता यदि 'मधुशाला' !

[१०७]

देने को जो मुझे कहा था,
दे न सकी मुझको हाला,
देने को जो मुझे कहा था,
दे न सकी मुझको प्याला;
समझ विश्व की निर्बलता मैं
कहा नहीं कुछ भी करता,
किंतु स्वयं ही देख मुझे अब
शरमा जाती मधुशाला !

[१०८] ✓

एक समय संतुष्ट बहुत था
पा मैं थोड़ीसी हाला,
भोला-सा था मेरा साक़ी,
नन्हासा मेरा प्याला
छोटेसे इस जग की मेरे
स्वर्ग बलाएँ ले [illegible]
विस्तृत जग में, हाय, गई खो
मेरी नन्हीं मधुशाला !

[१०९]

बहुतेरे मदिरालय देखे,
बहुतेरी देखी हाला,
भाँति-भाँति का आया मेरे
हाथों में मधु का प्याला,
एक-एकसे बढ़कर सुंदर
साक़ी ने सत्कार किया,
जँची न आँखों में पर कोई,
हाय, प्रथम-सी मधुशाला !

[११०]

एक समय छलका करती थी
मेरे अधरों पर हाला,
हुआ निछावर मुझपर करता
था, हा, एक समय प्याला,
एक समय पीनेवाले, साक़ी
आलिंगन करते थे,
आज बनी हूँ निर्जन मरघट,
एक समय थी मधुशाला!

[१११]

जला हृदय की भट्टी खींची
मैंने आँसू की हाला,
छलछल छलका करता इससे
पल-पल पलकों का प्याला,
आँखें आज बनी हैं साक़ी
गाल गुलाबी पी होते,
कहो न विरही मुझको, मैं हूँ
चलती - फिरती मधुशाला!

[११२]

कितनी जल्दी रंग बदलती
है अपना चंचल हाला!
कितनी जल्दी घिसने लगता
हाथों में आकर प्याला!
कितनी जल्दी साक़ी का
आकर्षण घटने लगता है!
अरे, दूसरे ही दिन पहले-
सी न गई रह मधुशाला!

[११३]

बूँद-बूँद के हेतु कभी
तुझको तरसाएगी हाला,
कभी हाथ से छिन जाएगा
तेरा यह मादक प्याला;
पीनेवाले! साक़ी की मीठी
बातों में मत आना,
मेरे भी गुण यों ही गाती
एक दिवस थी मधुशाला!

[११४]

छोड़ा मैंने पंथ-मतों को
तब कहलाया मतवाला !
चली सुरा मेरा पग धोने
तोड़ा मैंने जब प्याला !
अब मानी मधुशाला मेरे
पीछे-पीछे फिरती है !
क्या कारण ? अब छोड़ दिया है
मैंने जाना मधुशाला !

[११५]

यह न समझना, पिया हलाहल
मैंने जब न मिली हाला,
तब मैंने खप्पर अपनाया,
ले सकता था जब प्याला !
जले हृदय को और जलाना
सूझा मैंने मरघट को
अपनाया, जब इन चरणों में
लोट रही थी मधुशाला !

[११६]

कितनी आई और गई पी
इस मदिरालय में हाला !
अब तक टूट चुकी है कितने
मादक प्यालों की माला !
कितने साक़ी अपना-अपना
काम खतम कर दूर हुए !
कितने पीनेवाले आए
किंतु वही है मधुशाला !

[११७]

कितने अधरों की रक्खेगी
याद भला मादक हाला,
कितने हाथों को रक्खेगा
याद भला मधु का प्याला,
कितनी शक्लों को रक्खेगा
याद भला भोला साक़ी,
कितने पीनेवालों में है
एक अकेली मधुशाला !

[११८]

दर-दर घूम रहा था तब मैं
चिल्लाता—हाला ! हाला !
मुझे न मिलता था मदिरालय,
मुझे न मिलता था प्याला;
मिलन हुआ, पर नहीं मिलन सुख
लिखा हुआ था क़िस्मत में,
मैं अब जमकर बैठ गया हूँ
घूम रही है मधुशाला !

[११६]

मैं मदिरालय के अंदर हूँ,
मेरे हाथों में प्याला,
प्याले में मदिरालय बिंबित
करनेवाली है हाला;
इस उधेड़-बुन में ही मेरा
सारा जीवन बीत गया—
मैं मधुशाला के अंदर या
मेरे अंदर मधुशाला !

[१२०]

किसे न पीने की अभिलाषा,
किसे नहीं भाता प्याला ?
इस जगती के मदिरालय में
तरह-तरह की है हाला।
अपनी-अपनी इच्छा के
अनुसार सभी पी मदमाते;
एक सभीका मादक साक़ी,
एक सभीकी मधुशाला !

[१२१]

वह हाला, कर शांत सके जो
मेरे अंतर की ज्वाला,
जिसमें मैं बिंबित-प्रतिबिंबित
प्रतिपल, वह मेरा प्याला,
मधुशाला वह नहीं जहाँ पर
मदिरा बेची जाती है,
भेंट जहाँ मस्ती की मिलती
मेरी तो वह मधुशाला !

[१२२]

मतवालापन हाला से ले
मैंने तज दी है हाला,
पागलपन लेकर प्याले से
मैंने छोड़ दिया प्याला,
साक़ी से मिल, साक़ी में मिल
अपनापन मैं भूल गया,
मिल मधुशाला की मधुता में
भूल गया मैं मधुशाला!

[१२३]

मदिरालय के द्वार ठोंकता
क़िस्मत का छूँछा प्याला,
गहरी-ठंढी साँसें भर-भर
कहता था हर मतवाला,
कितनी थोड़ीसी यौवन की
हाला, हा, मैं पी पाया!
बंद गई हो कितनी जल्दी
मेरी जीवन-मधुशाला!

[१२४]

कहाँ गया वह स्वर्गिक साक़ी !
कहाँ गई सुरभित हाला !
कहाँ गया स्वप्निल मदिरालय !
कहाँ गया स्वर्णिम प्याला !
पीनेवालों ने मदिरा का
मूल्य, हाय, कब पहचाना ?
फूट चुका जब मधु का प्याला,
टूट चुकी जब मधुशाला !

[१२५]

अपने युग में सबको अनुपम
ज्ञात हुई अपनी हाला,
अपने युग में सबको अद्भुत
ज्ञात हुआ अपना प्याला,
फिर भी वृद्धों से जब पूछा
एक यही उत्तर पाया—
अब न रहे वे पीनेवाले,
अब न रही वह मधुशाला !

[१२६]

‘मय’ को करके शुद्ध दिया
है नाम गया उसको ‘हाला’,
‘मीना’ को ‘मधुपात्र’ दिया
‘साग़र’ को नाम गया ‘प्याला’,
क्यों न मौलवी चौंकें, बिचकें
तिलक - त्रिपुंडी पंडित जी,
‘मय-महफ़िल’ अब अपना ली है
मैंने करके ‘मधुशाला’!

[१२७]

कितने मर्म जता जाती है
बार-बार आकर हाला,
कितने भेद बता जाता है
बार-बार आकर प्याला,
कितने अर्थों को संकेतों
से बतला जाता साक़ी,
फिर भी पीनेवालों को है
एक पहेली मधुशाला!

[१२८]

जितनी दिल की गहराई हो
उतना गहरा है प्याला,
जितनी मन की मादकता हो
उतनी मादक है हाला,
जितनी उर की भावुकता हो
उतना सुंदर साक़ी है,
जितना ही जो रसिक, उसे है
उतनी रसमय मधुशाला।

[१२९]

जिन अधरों को छुए,
बनादे मस्त उन्हें मेरी हाला,
जिस कर को छूदे, करदे
विक्षिप्त उसे मेरा प्याला,
आँख चार हो जिसकी मेरे
साक़ी से, दीवाना हो,
पागल बनकर नाचे वह
जो आए मेरी मधुशाला।

[१३०]

हर जिह्वा पर देखी जाएगी
मेरी मादक हाला,
हर कर में देखा जाएगा
मेरे साक़ी का प्याला,
हर घर में चर्चा अब हो
मेरे मधुविक्रेता क
हर आँगन में गमक उठेगी
मेरी सुरभित मधुशाला !

[१३१]

मेरी हाला में सबने
पाई अपनी-अपनी हाला,
मेरे प्याले में सबने
पाया अपना-अपना प्याला,
मेरे साक़ी में स
अपना प्यारा साक़ी देख
जिसकी जैसी रुचि थी उसने
वैसी देखी मधुशाला !

[१३२]

यह मदिरालय के आँसू हैं,
नहीं - नहीं मादक हाला !
यह मदिरालय की आँखें हैं,
नहीं-नहीं मधु का प्याला !
किसी समय की सुखदस्मृति है
साक़ी बनकर नाच रही
मदिरालय के हृदयांगरण में ;
चिर-विरहाकुल मधुशाला !

[१३३]

कुचल हसरतें कितनी अपनी,
हाय, बना पाया हाला !
कितने अरमानों को करके
खाक, बना पाया प्याला !
पी पीनेवाले चल देंगें,
हाय, न कोई जानेगा—
कितने मन के महल ढहे तब
खड़ी हुई यह मधुशाला !

[१३४]

विश्व ! तुम्हारे विषमय जीवन
में ला पाएगी हाला,
यदि थोड़ीसी भी वह मेरी
म द मा ती सा क़ी बा ला,
शून्य तुम्हारी घड़ियाँ कुछ भी
यदि यह गुंजित कर पाई,
जन्म सफल समझेगी जग में
अपना मेरी मधुशाला !

[१३५]

बड़े-बड़े नाज़ों से मैंने
पाली है साक़ीबाला,
कलित कल्पना का ही इसने
सदा उठाया है प्याला !
मान-दुलारों से ही रखना
इस मेरी सुकुमारी को,
विश्व ! तुम्हारे हाथों में अब
सौंप रहा हूँ मधुशाला !

बच्चन की

अन्य प्रकाशित रचनाओं का विवरण

लीडर प्रेस, इलाहाबाद

आकुल अंतर

(बच्चन की नवीनतम रचना)

यह कवि की १९४०-४२ में लिखित ७१ गीतों का संग्रह है। कवि को अपनी पिछली रचना 'एकात संगीत, लिखते समय आभास हुआ था कि उसकी कई कविताएँ आंतरिक अशांति को व्यक्त न करके वाह्य विह्वलता को मुखरित करती हैं। इस कारण भविष्य में उन्होंने अपने गीतों को 'आकुल अंतर' और 'विकल विश्व' दो मालाओं में रख-कर आंतरिक और वाह्य दोनों प्रकार की विक्षुब्धता को अलग अलग वाणी देने का निश्चय किया था। दोनों मालाओं के गीत इन तीन वर्षों में पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। इस पुस्तक में कवि ने 'आकुल अंतर' माला के अंतर्गत लिखित ७१ गीतों को संगृहीत किया है।

'एकांत संगीत' से 'आकुल अंतर' में कितना परिवर्तन आया है यह केवल इस बात से प्रकट हो जायगा कि 'एकात संगीत' का अंतिम गीत था 'कितना अकेला आज मैं' और 'आकुल अंतर' का अंतिम गीत है 'तू एकाकी तो गुनहगार'। भावों की किन-किन अवस्थाओं से यह परिवर्तन आया है, इसे देखना हो तो 'आकुल अंतर' पढ़िए।

छंद और तुक के बंधनों से मुक्त केवल लय के आधार पर लिखे गए कुछ गीत हिंदी के लिए सर्वथा नवीन और सफल प्रयोग हैं।

—लीडर प्रेस, इलाहाबाद।

एकांत संगीत

(दूसरा संस्करण)

यह कवि की १९३८-३९ में लिखित एक सौ गीतों का संग्रह है। देखने में यह गीत 'निशा निमंत्रण' के गीतों की शैली में प्रतीत होते हैं, परंतु पद, पंक्ति, तुक, मात्रा आदि में अनेक स्थानों पर स्वतंत्रता लेकर कवि ने इनकी एक-रूपता में भी विभिन्नता उत्पन्न की है।

कवि ने जिस एकाकीपन का अनुभव निशा निमंत्रण में मुखरित किया था उसकी यहाँ चरम सीमा पहुँच गई है। 'कल्पित साथी' भी साथ में नहीं है। कवि के हृदय में वेदना इतनी घनीभूत हो गई है कि उसे बताने के लिए वातावरण की सहायता की भी आवश्यकता नहीं होती। गीतों का क्रम रचना-क्रम के अनुसार होने से कवि की भावनाओं का जैसा स्वाभाविक चित्र यहाँ आपको मिलेगा वैसा और किसी कृति में नहीं।

कवि ने जीवन के एकांत में क्या देखा, क्या अनुभव किया, क्या सोचा, यदि इसे जानना चाहते हैं तो एकात संगीत को लेकर एकांत में बैठ जाइए।

दूसरा संस्करण नए ठाट-बाट से छपकर तैयार है।

—लीडर प्रेस, इलाहाबाद

निशा निमंत्रण

(तीसरा संस्करण)

यह कवि की १९३७-३८ में लिखित एक कहानी और एक सौ गीतों का संग्रह है। 'निशा निमंत्रण' के गीतों से बच्चन की कविता का एक नया युग आरंभ होता है। १३-१३ पंक्तियों में लिखे गए ये गीत विचारों की एकता, गठन और अपनी संपूर्णता में अंग्रेज़ी के सॉनेट्स की समता करते है।

'निशा निमंत्रण' के गीत सायंकाल से आरंभ होकर प्रातःकाल समाप्त होते हैं। रात्रि के अंधकारपूर्ण वातावरण से अपनी अनुभूतियों को रंजित कर बच्चन ने गीतों की जो शृंखला तैयार की है वह आधुनिक हिंदी साहित्य के लिए सर्वथा मौलिक वस्तु है। गीत एक दूसरे से इस प्रकार जुड़े हुए हैं कि यह सौ गीतों का संग्रह न होकर सौ गीतों का एक महागीत है, शत दलों का एक शतदल है।

एक ओर तो इनमें प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण है दूसरी ओर हर प्राकृतिक दृश्य के साथ कवि की भावनाओं का ऐसा संबंध दिखाया गया है मानो कवि की भावनाएँ स्वयं उन प्राकृतिक दृश्यों में स्थूल रूप पा गई हैं। सूर्यास्त के साथ कवि की आशाएँ टूट गई हैं। रात के अंधकार में कवि का शोक छा गया है। प्रभात की अरुणिमा में भविष्य का संकेत कर कवि ने विदा ले ली है।

इसका सौंदर्य देखना हो तो शीघ्र ही अपनी प्रति मँगा लीजिए।

—लीडर प्रेस, इलाहाबाद

मधु कलश

(तीसरा संस्करण)

यह कवि की १९३५-३६ में लिखित 'मधुकलश', कवि की वासना', 'सुषमा', 'कवि की निराशा', 'री हरियाली', 'कवि का गीत', 'पथ भ्रष्ट', 'कवि का उपहास', 'माँझी', 'लहरों का निमंत्रण', 'मेघदूत के प्रति' और 'गुलहज़ारा' शीर्षक कविताओं का संग्रह है।

आधुनिक समय में समालोचकों द्वारा बच्चन की कविताओं का जितना विरोध हुआ है संभवतः उतना और किसी कवि का नहीं हुआ। उन्होंने अपने विरोधियों की कटु आलोचनाओं का उत्तर कभी नहीं दिया परंतु उससे जो उनकी मानसिक प्रतिक्रिया हुई है उसे अवश्य काव्य में व्यक्त किया है। उत्तर प्रत्युत्तर में जो बात कटु हो जाती वही कविता में किस प्रकार मधुर हो गई है, 'मधु कलश' की अधिकांश कविताएँ इसका प्रमाण हैं। कवि ने चारों ओर के आक्रमण के बीच किन भावनाओं और विचारों से अपनी सत्ता को स्थिर रक्खा है उसे देखना हो तो आप 'मधु कलश' की कविताएँ पढ़िए। इनके अन्दर साहित्य के आलोचकों को ही नहीं जीवन के आलोचकों को भी उत्तर है, कवि के लिए ही नहीं मानवता के लिए भी संदेश है।

इसी पुस्तक के विषय में विश्वमित्र में लिखा था, 'बच्चन जी की कविताएँ पढ़ते समय हमें इस बात की प्रसन्नता होती है कि हिंदी का यह कवि मानवता का गीत गाता है।

—लीडर प्रेस, इलाहाबाद

म० शा० ८

मधुबाला

(चौथा संस्करण)

यह कवि की १६३४-३५ में लिखित 'मधुबाला' 'मालिक-मधुशाला', 'मधुपायी, 'पथ का गीत', 'सुराही', 'प्याला', 'हाला' 'जीवन तरुवर', 'प्यास', 'बुलबुल', 'पाटल माल' 'इस पार-उस पार', 'पाँच पुकार', 'पगध्वनि' और 'आत्म परिचय' शीर्षक कविताओं का संग्रह है।

मधुशाला के पश्चात लिखे गए इन नाटकीय गीतों में मधुबाला और मधुपायी ही नहीं प्याला, हाला और सुराही आदि भी सजीव होकर अपना अपना गीत गाने लगे हैं। कवि को मधुशाला का गुणगान करने की आवश्यकता नहीं रह गई, वह स्वयं मस्त होकर आत्म-गान करने लगी है। इन गीतों में आप पाएँगे विचारों की नवीनता, भावों की तीव्रता, कल्पना की प्रचुरता और सुस्पष्टता, भाषा की स्वाभाविकता, छंदों का स्वच्छंद संगीतात्मक प्रवाह और इन सब के ऊपर वह सूक्ष्म शक्ति जो प्रत्येक हृदय को स्पर्श किए बिना नहीं रह सकती कवि का व्यक्तित्व।

इन्हीं गीतों के लिए प्रेमचंद जी ने लिखा था कि इनमें बच्चन का अपना व्यक्तित्व है, अपनी शैली है, अपने भाव हैं और अपनी फ़िलासफ़ी है।

—लीडर प्रेस, इलाहाबाद।

ख़ैयाम की मधुशाला

(दूसरा संस्करण)

यह फिट्ज़जेराल्ड कृत रुबाइयात उमर ख़ैयाम का पद्यात्मक हिंदी रूपांतर है जिसे कवि ने सन् १९३३ में उपस्थित किया था। मूल पुस्तक के विषय में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। इसकी गणना संसार की सर्वोत्कृष्ट कृतियों में है। अनुवाद में प्रायः मूल का आनंद नहीं आता, परंतु बच्चन के अनुवाद में कहीं आपको यह कमी न दीख पड़ेगी। वे एक शब्द के स्थान पर दूसरा शब्द रखने के फेर में नहीं पड़े। उन्होंने उमर ख़ैयाम के भावों को ही प्रधानता दी है। इसी कारण उनकी यह कृति मौलिक रचना का आनंद देती है।

स्वर्गीय प्रेमचंद ने जनवरी '३६ के 'हंस' में पुस्तक की आलोचना करते हुए लिखा था कि 'बच्चन ने उमर ख़ैयाम की रुबाइयों का अनुवाद नहीं किया; उसी रंग में डूब गए हैं।' हिंदी में पुस्तक के और अनुवाद भी हैं पर 'लीडर' ने स्पष्टतया लिखा था कि:—
Bachchan has a great advantage over many translators in that he himself feels, for all we know very much like the poet astronomer of Nishapur.

दूसरे संस्करण में मूल अंग्रेज़ी अनुवाद भी दिया गया है।

—लीडर प्रेस, इलाहाबाद।

तेरा हार

(तीसरा संस्करण)

यह कवि की सन् १६२९-३० में लिखित, स्वीकृत, आशे, नैराश्य, कीर, झंडा, बंदी, बंदी मित्र, कोयल, मध्याह्न, चुंबन, मधुकर, दुख में, दुखों का स्वागत, आदर्श प्रेम, तुमसे, मधुरस्मृति, दुखिया का प्यार, कलियों से, विरह-विषाद, मूक प्रेम, उपहार, मेरा धर्म, संकोच, प्रेम का आरंभ, आत्म संदेह, जन्म दिवस शीर्षक कविताओं का संग्रह है।

यद्यपि यह बच्चन की सर्व प्रथम कृति है, फिर भी सभी पत्र-पत्रिकाओं ने इसकी प्रशंसा की है। बच्चन की कविताओं का क्रम विकास समझने के लिए इसे देखना बहुत आवश्यक है। किसी कवि की अंतिम कृतियाँ ही उसकी उच्चता का आभास देती हैं परंतु कवि ने कहाँ से प्रारंभ करके वह उच्चता प्राप्त की इसे उसकी आरंभिक रचनाएँ ही बतला सकती हैं।

'विश्वमित्र' ने इसके विषय में लिखा था, 'इसके रचयिता महोदय का नाम यद्यपि हम हिंदी में प्रथम बार देख रहे हैं तथापि कविताएँ पढ़ने से मालूम होता है कि वे इस कला में सिद्ध-हस्त हैं। कविताएँ सुंदर और सरस हैं और भाव यथेष्ट परिपक्व हैं।'

—लीडर प्रेस, इलाहाबाद।